

मामिडी वेंकट सत्यनारायणा माणिक्याला राव और अन्य

बनाम

मंडेला नरसिंहस्वामी और अन्य

27 अगस्त, 1965

न्यायाधिपति .के. सरकार, रघुबर दयाल और वी. रामास्वामी

भारतीय परिसीमा अधिनियम, अनुच्छेद 144 और 120 संयुक्त हिंदू परिवार की सम्पत्ति में अंश का अन्य संक्रामण-परिवार के सदस्यों का कब्जा, चाहे वह संपत्ति के लिए प्रतिकूल हो। वह अवधि जिसके भीतर विभाजन और कब्जा के लिए सम्पत्ति के एलियनी द्वारा मुकदमा लाया जाना चाहिए।

एन और उनके चार बेटों के खिलाफ धन के वाद में एक डिक्री पारित की गई थी। जो मिताक्षरा हिंदू संयुक्त परिवार के सदस्य थे। उस डिक्री के निष्पादन में संयुक्त परिवार की सम्पत्तियों में चार बेटों के शेयरों का आदेश दिसंबर, 1936 में नीलामी के लिए रखे गए और एस. द्वारा क्रय किए गये थे। एन. के हिस्से को बिक्री के लिए नहीं रखा गया क्योंकि उनके दिवालिया घोषित होने का आवेदन तब लंबित था। एस को बिक्री विधिवत पुष्टि की गई। 6 नवंबर, 1939 को आदेश 21 नियम 35 (2) व 96 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत एक ओदश दिया गया था कि संयुक्त परिवार के सदस्यों के कब्जे के साथ पी को खरीदी गई संपत्तियों के संयुक्त

कब्जे के वितर.किया जाए। इस आदेश को लागू किया गया था और नियमों में निर्धारित ढोल मुनादी द्वारा पी को कब्जा सौंप दिया गया था। इसके बाद पी ने सम्पत्तियों को एस को वापस हस्तान्तरित कर दिया। 16 अक्टूबर 1951 को एस ने संयुक्त परिवार के तत्कालीन सदस्यों और एलीयनी के खिलाफ एक मुकदमा दायर किया जिसमें संयुक्त परिवार की संपत्तियों को पांच बराबर शेयरों में विभाजित करने और उसके बाद प्रतिवादी को कब्जे से हटाकर ऐसे चार शेयरों पर कब्जा करने की मांग की गई। निचली अदालत ने मुकदमे का फैसला सुनाया लेकिन यह अभिनिर्धारित किया कि एस 4/5 वें हिस्से का हकदार नहीं था बल्कि केवल 2/3 वें हिस्से का हकदार था क्योंकि डिक्री से पहले एन के लिए एक 5 वां बेटा पैदा हुआ था जिसे मुकदमे या निष्पादन कार्यवाही में पक्षकार नहीं बनाया गया था और जिसका हिस्सा परिणामस्वरूप नीलामी बिक्री के तहत पारित नहीं किया गया था। कुछ प्रतिवादियों ने उच्च न्यायालय में एक अपील दायर की जिसने यह मानते हुए अपील की अनुमति दी कि मुकदमा परिसीमा अधिनियम के अनुच्छेद 144 के तहत वर्जित है। एस ने उच्च न्यायालय में इस आधार पर एक आपत्ति दर्ज की थी कि उन्हें संपत्तियों के 4/5 वें हिस्से का हकदार ठहराया जाना चाहिए था, जिसे उच्च न्यायालय ने परिसीमा के प्रश्न पर अपने निर्णय के मध्य नजर योग्यताओं पर चर्चा किए बिना खारिज कर दिया था। एस की मृत्यु के बाद अपीलकर्ताओं ने एस के उत्तराधिकारियों के रूप में भारतीय संविधान के

अनुच्छेद 133 के तहत इस न्यायालय में अपील की। निर्णय के लिए जो दो प्रश्न उठे थे (1) क्या मुकदमा अनुच्छेद 144 व 120 परिसीमा अधिनियम के तहत वर्जित था एवं (2) क्या एस 4/5 वें हिस्से का हकदार था।

निर्णय: न्यायाधिपति सरकार और रघुबर दयाल के मतानुसार (i) (a) दावे का परिसीमा अधिनियम के अनुच्छेद 144 के तहत वर्जित मानने का दृष्टिको.प्रकर.में गंभीर कठिनाईयां प्रस्तुत करता है। परंतु संयुक्त परिवार की संपत्ति में सह.भागीदार के अविभाजित हित का खरीदार जो कुछ भी उसने खरीदा है उस पर कब्जा करने का हकदार नहीं है। उसका एकमात्र अधिकार संपत्ति के विभाजन के लिए मुकदमा करना और जिसका हिस्सा उसने खरीदा है और जो विभाजन पर सह-खरीददार के हिस्से में आता है उसकी मांग करना। उसके अधिकार का अधिकार उस अवधि से होगा जब उसके पक्ष में एक विशिष्ट आवंटन किया जाता है। इसलिए एस तब तक कब्जे का हकदार नहीं था जब तक कि एक विभाजन नहीं हो गया। चूंकि प्रतिवादी का कब्जा उसके लिए केवल तभी प्रतिकूल हो सकता है जब वह कब्जे का अधिकारी हो। अतः अनुच्छेद 144 लागु करने में समस्या उत्पन्न हुई।

सिद्धेश्वर मुखर्जी बनाम भुवनेश्वर प्रसाद नारायण, 1954, एससीआर 177 पर भरोसा किया।

व्यापूरी बनाम सोनम्मा बोल अम्मानी; 1916 आईएलआर 39 मद्रास

81

महांत सुदर्शन दास बनाम महान राम कृपाल दास ;1949 एल आर
77 आई ए 42,

(b) यद्यपि अनुच्छेद 144 लागू होने की उपधार.की जाए तब भी दावा वर्जित नहीं होता है। वर्तमान मामले में प्रतिवादी निर्विवाद रूप 12 वर्ष से काबिज नहीं है। 6 नवंबर 1939 के आदेश के तहत प्रतिकात्मक कब्जा देने से प्रतिवादियों का प्रतिकूल कब्जा बाधित हो गया। इसलिए समय उस तारीख से चलना प्रारंभ होगा। मुकदमा तारीख से 12 साल के भीतर लाया गया है। ऐसे में मुकदमा उक्त अनुच्छेद के तहत वर्जित नहीं है।

श्री राधा कृष्णचंद्रजी बनाम राम बहादुर ए.आई.आर.;1917
पी.सी.197 ए

हालांकि यह कहा गया है कि वर्तमान मामले में किया गया कब्जे का वितर.का आदेश निरर्थक था क्योंकि एस और उनके हस्तान्तरित व्यक्ति जिन्होंने सहदायिकी सम्पत्ति में अविभाजित हिस्सा खरीदा था, किसी भी कब्जे का अधिकारी नहीं दिया। उक्त मामले में आदेश पारित करने वाले विद्यवान न्यायालय ने अपने क्षेत्राधिकार में सीमित रहते हुए कानूनी त्रुटि की गई। यदि उक्त आदेश को रद्द नहीं किया जाये तो ऐसे आदेश का पूर्ण

प्रभाव होता है।

येलुमलाई चेट्टी बनाम श्रीनिवास चेट्टी;1906 आई.एल.आर.29
मद्रास 294

महादेव सखाराम पारकर बनाम जानू नामजी हटले;1912
आई.एल.आर.36

बम्बई 373 और जंग बहादुर सिंह बनाम हनवंत सिंह;1921
आई.एल.आर.43 इलाहाबाद 520

(ii) अनुच्छेद 120 उन मुकदमों पर लागू होता है जिनके लिए कोई परिसीमा अवधि नहीं है तथा जिस दिन वाद का हक उत्पन्न हो उस दिन 6 वर्ष की अवधि प्रस्तावित करता है। कहीं और प्रदान किया गया है और छह साल की अवधि निर्धारित करता है। तारीख जब मुकदमा करने का अधिकार प्राप्त होता है। ख् 636 डी.आई. मुकदमा करने का अधिकार अनुच्छेद 120 के प्रयोजन के लिए तब प्राप्त होता है जब मुकदमें में दावा किये गये अधिकार का संचय होता है तथा एक स्पष्ट धमकी होती है कि प्रतिवादी इसका उल्लंघन करेगा। अब वर्तमान मामले में वादे के अधिकारी के प्रति जो भी हो, यह दिखाने के लिए कुछ भी नहीं है कि उस अधिकार को उत्तरदाताओं द्वारा कभी भी किसी तरह की चुनौती दी गई थी इसलिए यह मानना असंभव है कि मुकदमा अनुच्छेद 120 के तहत वर्जित है।

एम. एस. रुखमा बाई बनाम लाला लक्ष्मीनाराय. 1960, 2 एस. सी.

आर. 253 और सी. मोहम्मद यूनुस बनाम सैयद उन्नीसा ए. आई. आर.
1961 एस. सी. 808

बाल शेवंतीबल बनाम जनार्दन आर.वारिक ए.आई.आर.1939 बम्बई
322 यह अभिनिर्धारित किया गया है कि मुकदमा करने का अधिकार
बेचान की तारीख से उपार्जित हुआ होता है।

(iii) प्रति आक्षेप का कोई गु.नहीं था। एस ने जो निलामी बिक्री में
जो खरीदा वह संयुक्त परिवार में तब पैदा हुए एस के बेटों का हिस्सा था।
नीलामी बिक्री की तारीख पर वह शेयर जो मूल रूप से 4/5 था वह एन के
लिए एक और बेटे के जन्म से, न तो मुकदमे या निष्पादन कार्यवाही में
पक्षकार बनाया गया था, दो तिहाई तक कम हो गया था। ऐसा होने के
कार.एस पाँचवें बेटे का छठा हिस्सा भी पाने का हकदार नहीं था।

न्यायाधिपति रामास्वामी के अनुसार:-

(i) संयुक्त सिंधु परिवार के अंश का क्रेता उक्त संपत्ति में हक प्राप्त
नहीं करता है। तथा वह उक्त संपत्ति की विशिष्ट टुकड़े में स्वयं को काबिज
करने का दावा नहीं कर सकता है। एक एलीयनी द्वारा सहदायी सदस्यों के
विरुद्ध किया गया विभाजन का दावा तकनीकी रूप से एक विभाजन का
दावा है जिसमें संयुक्त स्वामित्व के विघटन का प्रभाव नहीं होना उक्त दावे
से ना तो शेष संपत्ति में परिवार के सदस्यों के संयुक्त स्वामित्व के
विभाजन का प्रभाव होगा ना ही संयुक्त परिवार के कॉरपोरेट करेक्टर पर

कोई प्रभाव पड़ेगा। ऐसे में एलीयनी का संपत्ति के विभाजन के मांग का अधिकार एक निरंतर अधिकार नहीं है जिस पर परिसीमा के प्रावधान लागू ना हो।

अतियागरी वेंकटरमैया बनाम अय्यगारी रामय्या आई.एल.आर.25
मद्रास 690

(ii) हालांकि एक हिंदू सह.भागीदार के अविभाजित हित का एलीयनी अन्य सह.भागीदारों के साथ संयुक्त कब्जा करने या पारिवारिक संपत्ति के किसी भी हिस्से पर अलग कब्जा करने का हकदार नहीं है। वह उक्त संपत्ति को प्राप्त करने का हकदार है जो पारिवारिक संपत्ति विभाजन पश्चात के उस हिस्से अधिकार में आ सकता है। वर्तमान मामले में एलीयनी ने सामान्य विभाजन के लिए एक मुकदमा इस प्रार्थना के साथ दायर किया कि उसे पारिवारिक संपत्ति के उस हिस्से के कब्जे में रखा जाए जो उसके हिस्से में आवंटित किया जा सकता है। इस तरह के मुकदमे को केवल विभाजन के मुकदमे के रूप में मानना सही नहीं है। वादी द्वारा मांगी गई मुख्य राहत वादी संपत्ति के उस हिस्से के कब्जे की राहत है जो एलीयनी के हिस्से को आवंटित की जा सकती है। विभाजनका अनुतोष अपने अधिकार पूर्ति का माध्यम है,

थानी वी.दक्षिणामूर्ति आई.एल.आर.1955 मद्रास 1278

(iii) नॉन एलीयनी सदस्यों के कब्जे को एलीयनी के स्थान पर हुए

कब्जा के रूप में नहीं माना जा सकता क्योंकि क्रेता-एलीयनी विक्रय की गई सम्पत्ति में कोई हित प्राप्त नहीं करते हैं तथा संयुक्त परिवार के सदस्यों के साथ टीनेन्ट-इन-कॉमन नहीं बनते ना ही संयुक्त कब्जे के हकदार होते हैं। ऐसे में एलीयनी के अधिकार की स्पष्ट स्वीकृति अथवा संयुक्त संपत्ति के उपभोग की अनुपस्थिति में नॉन एलीयनटींग सहदायी का कब्जा एलीयनी के कब्जे से उस दिनांक से प्रतिकूल हो जाता है जिस दिनांक को एलीयनी सामान्य विभाजन हेतु वाद प्रस्तुत करने एवं एलीयनर के हक का कब्जा प्राप्त करने का अधिकारी हो जाता है। एलीयनी द्वारा अविभाजित हित का क्रय करना प्रतिकूल कब्जे की अवधारणा के साथ असंगत नहीं है।

सुदर्शन दास बनाम राम कृपाल दास ए.आई.आर.1950 पी.सी.44 ए,

अनुच्छेद 144 के तृतीय कतार अनुरूप समय सिमा तब प्रारंभ होती है तब जब प्रतिवादी का कब्जा वादी के लिए प्रतिकूल हो जाता है। वर्तमान मामले में इसलिए अविभाजित शेयर की खरीद की तारीख से यानी 21 दिसंबर 1936 से प्रतिकूल कब्जा होना शुरू हो गया।

(iv) तथापि न्यायालय द्वारा प्रतिवादी 2 से 5 को नोटिस के बाद पी के पक्ष में प्रतिकात्मक कब्जे का अनुदान का मामला कानूनी रूप से वास्तविक कब्जे के वितर के समान था और इसलिए प्रतिवादियों के पक्ष में प्रतिकूल कब्जे की निरंतरता को तोड़ने के लिए पर्याप्त था। यह मानते हुए भी कि प्रतिकात्मक कब्जे का अनुदान नहीं दिया जाना चाहिए था।

निष्पादन अदालत ने इस तरह का आदेश देने में अवैध रूप से काम किया, यह नहीं कर सका या कि प्रतिकात्मक कब्जा का कार्य कानून की नजर में एक शून्य था।

येलुमलाई चेट्टी बनाम श्रीनिवास चेट्टी आई.एल.आर.29 मद्रास 295

श्री राधा कृष्णचंद्रजी बनाम राम बहादुर ए.आई.आर.1917 पी.सी.197

अतः वादी का वाद परिसीमा अधिनियम के अनुच्छेद 144 के तहत वर्जित नहीं है तथा उच्च न्यायालय द्वारा लिया गया दृष्टिकोण हस्तगत प्रकरण में उचित नहीं है।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील सं.420/1963

आंध्रप्रदेश उच्च न्यायालय की अपील मुकदमा संख्या 300/1955 में दिनांक 09 सितंबर, 1960 के फैसले और डिक्री से अपील एम सूर्यनाराय.मूर्ति और टी.वी.आर.टाटाचारी अपलार्थी के तरफ से के.आर.चौधरी उत्तरदाता 1 से 13 के लिए।

सरकार जे.; स्वयं और रघुबर दयाल जे.के लिए एक निश्चित मनी सूट में 1953 का स्मॉल कॉज सूट नंबर 9 नरसिम्हास्वामी और उनके चार बेटों के खिलाफ एक डिक्री पारित की गई थी जो मिताक्षरा हिंदू संयुक्त के सदस्य थे। उस डिक्री के निष्पादन में संयुक्त परिवार की संपत्तियों में चार बेटों के शेयर जिनमें कुल मिलाकर 4 1/5 वां हिस्सा कहा जाता है 21

दिसंबर 1936 को नीलामी के लिए रखे गए थे और एक शिवय्या द्वारा खरीदे गए थे जिनके उत्तराधिकारी अपीलकर्ता हैं। पिता नरसिम्हास्वामी एस शेयर को बिक्री के लिए नहीं रखा गया था क्योंकि उसके दिवालिया घोषित होने का आवेदन तब लंबित था। शिवैया को बिक्री की विधिवत पुष्टि की गई। इसके बाद शिवय्या ने नीलामी में खरीदी गई संपत्तियों को प्रकाशलिंगम नामक व्यक्ति को बेच दिया। 6 नवंबर 1939 को आदेश 21 नियम 35(2) व 96 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत एक आदेश दिया गया था कि वास्तविक कब्जे में संयुक्त परिवार के सदस्यों के साथ-साथ प्रकाशलिंगम को खरीदी गई संपत्तियों का संयुक्त कब्जा दिया जाए। इस आदेश का विधिवत पालन किया गया और इन नियमों में निर्धारित अनुसार ढोल बजाकर उस तथ्य को प्रकाशित करके प्रकाशलिंगम को कब्जा दे दिया गया। इसके बाद प्रकाशलिंगम ने संपत्तियों को शिवय्या को वापस हस्तांतरित कर दिया।

16 अक्टूबर, 1951 को शिवैया ने संयुक्त परिवार के तत्कालीन सदस्यों तथा एलीयनी जिनकी संख्या उस समय तक बढ़ गई थी, और उनसे अलग रहने वाले कई अन्य व्यक्तियों के खिलाफ मुकदमा दायर किया जिसमें से यह अपील उत्पन्न हुई। उन्होंने बंटवारे की मांग की। संयुक्त परिवार की संपत्तियों को पांच बराबर शेयरों में बांटा गया और उसके बाद प्रतिवादियों को कब्जे से हटाकर ऐसे चार शेयरों पर कब्जा कर लिया गया। ट्रायल कोर्ट ने मुकदमे का फैसला सुनाया लेकिन यह माना कि शिवय्या 4/5 वें हिस्से

का हकदार नहीं थाए बल्कि केवल 2/3 हिस्से का हकदार था क्योंकि डिक्री से पहले नरसिम्हास्वामी के 5 वें बेटे का जन्म हो चुका थाए जिसे मुकदमे में पक्षकार नहीं बनाया गया था। निष्पादन की कार्यवाही और जिसका हिस्सा परिणामस्वरूप नीलामी बिक्री के तहत पारित नहीं हुआ था। कुछ प्रतिवादियों ने इस फैसले के खिलाफ आंध्रप्रदेश उच्च न्यायालय में अपील की। उच्च न्यायालय ने इस आधार पर अपील की अनुमति दी कि मुकदमा अनच्छेद 144 परिसीमा अधिनियम के तहत वर्जित था। शिवय्या ने इस आधार पर उच्च न्यायालय में एक क्रॉस आपत्ति दायर की थी कि उन्हें संपत्तियों के 4/5 वें हिस्से का हकदार माना जाना चाहिए थाए जिसे उच्च न्यायालय ने प्रश्न पर अपने निर्णय के मद्देनजर इसकी योग्यताओं पर चर्चा किए बिना खारिज कर दिया था। सीमा का उच्च न्यायालय में अपील लंबित रहने के कार.शिवय्या की मृत्यु हो गईए अपीलकर्ता उनके उत्तराधिकारी के रूप में भारतीय संविधान के अनुच्छेद 133 के तहत आगे की अपील में इस न्यायालय में आए हैं।

ट्रायल कोर्ट में कई सवाल उठाए गए थे लेकिन फैसले के बाद केवल दो ही बचे हैं। वे हैं क्या मुकदमा अनुच्छेद 144 व 120 परिसीमा अधिनियम के तहत वर्जित था। एवं (2) क्या एस 4/5 वें हिस्से का हकदार था।

परिसीमा के प्रश्न परए मामले पर लागू अधिनियम के दो अनुच्छेद

हमारे विचारार्थ रखे गए थे। वे अनुच्छेद 144 और 120 हैं। हम इस मामले में यह तय करना अनावश्यक मानते हैं कि दोनों में से कौन सा अनुच्छेद लागू होता है, हमारे विचार में, मुकदमे को किसी के तहत वर्जित नहीं किया गया था।

जैसा कि पहले कहा गया था, उच्च न्यायालय ने माना कि अनुच्छेद 144 वाद पर लागू होता है। इस अनुच्छेद का अनुप्रयोग हमें कुछ बड़ी कठिनाइयाँ प्रस्तुत करता प्रतीत होता है जिनमें से कुछ का हम उल्लेख करना चाहते हैं। वह अनुच्छेद अचल संपत्ति या उसमें किसी भी हित के कब्जे के लिए एक मुकदमे से संबंधित है जो अन्यथा विशेष रूप से प्रदान नहीं किया गया है और उस तारीख से शुरू होने वाली बारह साल की अवधि निर्धारित करता है जब प्रतिवादी का कब्जा वादी के प्रतिकूल हो जाता है। यह लेख स्पष्ट रूप से संपत्ति के कब्जे के लिए एक मुकदमे पर विचार करता है जहां वादी के मुकाबले प्रतिवादी का उस पर प्रतिकूल कब्जा हो सकता है। अब यह अच्छी तरह से तय हो गया है कि सहदायिक का क्रेतासंयुक्त परिवार की संपत्ति में अविभाजित हितधारक जो कुछ भी खरीदा है उस पर कब्जा करने का हकदार नहीं है। उसका एकमात्र अधिकार संपत्ति के विभाजन के लिए मुकदमा करना और उसे उस संपत्ति के आवंटन के लिए पूछना है जो विभाजन पर उस सहदायिक के हिस्से में आ सकती है जिसका हिस्सा उसने खरीदा था। कब्जे का उनका अधिकार "उस अवधि से होगा जब उनके पक्ष में एक विशिष्ट आवंटन किया गया था" सिद्धेश्वर

मुखर्जी बनाम भुबनेश्वर प्रसाद नारायण सिंह 1954 एससीआर 177 पी पर 188 इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि विभाजन होने तक शिवय्या कब्जे का हकदार नहीं था। ऐसा होने पर यह तर्कपूर्ण है कि मुकदमे में प्रतिवादी कभी भी उसके खिलाफ संपत्तियों के प्रतिकूल कब्जे में नहीं हो सकता था क्योंकि कब्जा किसी व्यक्ति के खिलाफ तभी प्रतिकूल हो सकता था जब वह कब्जे का हकदार था। इस दृष्टिकोण का समर्थन व्यापूरी बनाम सोनाम्मा बोई अम्मानी, मद्रास आईएलआर 39 मद्रास 811 पूर्ण पीठ मामले की कुछ टिप्पणियों में पाया जा सकता है ।

वर्तमान मामले में उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों ने सोचा कि अनुच्छेद 144 की प्रयोज्यता को को महन्त सुदर्शनदास बनाम रामकृपाल दास 1949 LR 77 IA 42 में पारित न्यायिक समिति के निर्णय द्वारा समर्थित किया गया था। हमें काफी संदेह है कि मामला कोई सहायता प्रदान करता है। इसने उस अनुच्छेद 144 को धारण किया। अचल संपत्ति के साथ-साथ संपत्ति में भी हित को शामिल करने के लिए प्रतिकूल कब्जे की अवधारणा का विस्तार करता है। उस मामले में एक संपत्ति में अविभाजित हिस्से के खरीदार ने जो सहदायिक संपत्ति नहीं थी उस हिस्से पर कब्जा प्राप्त कर लिया था और उसे प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से उस पर स्वामित्व प्राप्त करने के लिए माना गया था। यह उस व्यक्ति का मामला नहीं था जो कब्जे का हकदार नहीं था। अब हम संपत्ति में हित के प्रतिकूल कब्जे से चिंतित नहीं हैं।

इस मामले पर अपनी कठिनाइयों को व्यक्त करने के बाद बिना निर्णय किए इस धारणा पर आगे बढ़ें कि अनुच्छेद 144 लागू है। फिर भी हमें ऐसा लगता है कि मुकदमा वर्जित नहीं है। यह विवाद में नहीं है कि मुकदमे को अनुच्छेद के तहत वर्जित करने के लिए प्रतिवादी को मुकदमे की तारीख से पहले बारह साल तक निर्बाध कब्जे में रहना होगा। अब वर्तमान मामले में ऐसा नहीं था। 6 नवंबर 1939 के आदेश के तहत प्रतीकात्मक कब्जा देने से प्रतिवादियों का प्रतिकूल कब्जा बाधित हो गया। इसलिए समय को उस तारीख से चलना शुरू करना होगा और ऐसा माना जाता है। मुकदमा उस तारीख से बारह साल के भीतर लाया गया था, इसलिए उस अनुच्छेद के तहत उस पर रोक नहीं थी। यह श्री राधा कृष्णचंद्रजी बनाम राम बहादुर एआईआर 1917 पीसी 197 के मामले से अनुसरण करेगा। जहां यह माना गया कि औपचारिक कब्जे की डिलीवरी भी प्रतिकूल कब्जे की निरंतरता को बाधित करती है।

हालाँकि, यह कहा गया था कि वर्तमान मामले में किया गया कब्जा वितरण का आदेश निरर्थक था क्योंकि शिवय्या और उनके हस्तांतरित व्यक्ति, जिन्होंने सहदायिकी संपत्ति में अविभाजित हिस्सा खरीदा था, किसी भी कब्जे के हकदार नहीं थे। हम इस बात से सहमत हैं कि आदेश का कानून में समर्थन नहीं किया जा सकता है लेकिन हम यह नहीं देखते हैं कि इस कारण से यह अमान्य था। यह ऐसा मामला नहीं है जहां आदेश क्षेत्राधिकार के बिना था। यह एक ऐसा मामला था जहां आदेश देने वाले

विद्वान न्यायाधीश ने अपने अधिकार क्षेत्र के भीतर कार्य करते हुए कानून में गलती की थी। ऐसे आदेश का पूर्ण प्रभाव होता है यदि इसे रद्द नहीं किया जाता है, जैसा कि इस मामले में नहीं था। येलुमलाई चेट्टी बनाम श्रीनिवास चेट्टी आईएलआर 29 मद्रास 294 जिसका हमें उल्लेख किया गया था। इस तर्क का समर्थन नहीं करता है कि आदेश अमान्य था। वहां निष्पादन बिक्री पर सहदायिकी संपत्ति में अविभाजित हिस्सेदारी के एक खरीदार ने एस के तहत कब्जे के लिए आवेदन किया था । 1882 की सिविल प्रक्रिया संहिता का 318 जो वर्तमान संहिता के आदेश 21 नियम 95 से मेल खाता है। उस आवेदन को परिसीमा द्वारा वर्जित मानकर खारिज कर दिया गया। बाद में जिस क्रेता ने बाद में निजी बिक्री के तहत संपत्ति में अन्य सहदायिकों का हित हासिल कर लिया था। उसने पूरी संपत्ति पर कब्जे के लिए मुकदमा दायर किया। यह तर्क दिया गया कि मुकदमा एस के तहत वर्जित था । पुराने कोड के धारा 244 (धारा 47 के वर्तमान कोड) क्योंकि क्रेता केवल निष्पादन के माध्यम से आगे बढ़ सकता है। उस विवाद से निपटने में यह कहा गया था कि यद्यपि सहदायिकी संपत्ति में अविभाजित शेयर का खरीदार केवल विभाजन के लिए पूछने का हकदार था। लेकिन ऐसे शेयर के खरीदार द्वारा निष्पादन के लिए केवल एक आवेदन पर यह अदालत में सक्षम नहीं था। कोर्ट बिक्री विभाजन का आदेश देने के लिए और इसलिए एस के तहत आवेदन को खारिज करने के लिए । पुरानी संहिता की धारा 318 का कब्जे के दूसरे मुकदमे पर पूर्व

न्याय के माध्यम से कोई प्रभाव नहीं पड़ा। इस मामले में आदेश 21 नियम 35, 95 या 96 के तहत किसी आदेश की वैधता के बारे में कुछ नहीं कहा गया।

हमें ऐसा लगता है कि प्रतिकूल कब्जे का प्रश्न एक तथ्य है। यदि वह व्यक्ति जिसके विरुद्ध प्रतिकूल कब्जा स्थापित किया गया है यह दर्शाता है कि उसने वास्तव में कब्जा प्राप्त किया है, चाहे वह कानूनी रूप से हो या नहीं तो इससे उसके विरुद्ध प्रतिकूल रूप से रखे गए किसी भी कब्जे में बाधा उत्पन्न होगी। सवाल यह है कि क्या वास्तव में प्रतिकूल कब्जे में कोई रुकावट थी और यह नहीं कि क्या वह रुकावट कानूनन उचित थी। प्रतीकात्मक कब्जे के वितरण के आदेश के तहत चाहे वह कानूनी हो या अन्यथा प्रकाशलिंगम ने कब्जा प्राप्त किया और यह उत्तरदाताओं द्वारा प्रतिकूल कब्जे में रुकावट थी। वर्तमान सूट में समयावधि अनुच्छेद 144 के तहत व्यवधान से शुरू होना चाहिए।

हम यहां यह देखना चाहते हैं कि मामले का यह पहलू उस विसंगति को उजागर करता है जो अनुच्छेद 144 के अनुप्रयोग से उत्पन्न होती प्रतीत होती है। इस मामले में 144 यदि 6 नवंबर 1939 के आदेश के तहत प्रकाशलिंगम का कब्जा कानून में कोई कब्जा नहीं था, क्योंकि जैसा कि तर्क दिया गया है, वह बिल्कुल भी कब्जा पाने का हकदार नहीं था तो यह मानना मुश्किल होगा कि उस समय किसी और ने संपत्ति पर प्रतिकूल

कब्जा कर रखा था । उसे चूंकि प्रकाशलिंगम या उनके उत्तराधिकारी शिवय्या उनके द्वारा लाए गए विभाजन के मुकदमे में डिक्री के बाद तक कब्जे के हकदार नहीं थे, अनुच्छेद 144 उस मुकदमे पर लागू नहीं होगा।

उत्तरदाताओं के विद्वान वकील ने हमें महादेव सखाराम बनाम जानू नामजी हटले आईएलआर 36 बॉम्बे 373 और जंग बहादुर सिंह बनाम हनवंत सिंह आईएलआर 43 इलाहाबाद 520 के पास भेजा यह दिखाने के लिए कि प्रतीकात्मक कब्जे की डिलीवरी से अपीलकर्ताओं को कोई लाभ नहीं होता है। अपीलकर्ताओं की ओर से कहा गया कि श्री राधा कृष्णचंद्रजी मामले में न्यायिक समिति के फैसले के मद्देनजर ये फैसले अब अच्छे कानून नहीं हैं।केसए एआईआर 1917 पीसी 197;2 द्द। हालाँकि इस विवाद की खूबियों के अलावा जो निस्संदेह विचार के योग्य है इन मामलों का सिद्धांत हमें वर्तमान मामले पर लागू नहीं होता है। उस सिद्धांत को आईएलआर 43 ऑल 520 के मामले में व्यक्त किया गया था जो कि आईएलआर 36 बॉम्बे 373 के मामले में निर्णय से भी स्पष्ट रूप से इन शब्दों में निहित है। "यदि कब्जा कानून के अनुसार दिया गया था तो निस्संदेह, कब्जे की डिलीवरी से संबंधित कार्यवाही के पक्षों के बीच, सीमा की गणना के लिए एक नई शुरुआत होगी और प्रतिवादियों के कब्जे को एक नया अतिक्रमण माना जाएगा वादी के अधिकार और संपत्ति पर एक नया अतिक्रमण। लेकिन अगर कानून द्वारा प्रदान किए गए तरीके से कब्जा नहीं दिया गया तो हमारी राय में कब्जे की डिलीवरी वादी को परिसीमा

की गणना के लिए एक नई शुरुआत नहीं दे सकती है।" "कानून के अनुसार" शब्दों से विद्वान न्यायाधीशों का तात्पर्य सिविल प्रक्रिया संहिता के अनुसार था, न कि किसी अन्य कानून के अनुसार। ये मामले प्रतीकात्मक कब्जे की डिलीवरी के आदेश से संबंधित थे जहां संहिता के तहत वास्तविक कब्जे का आदेश दिया जा सकता था। इस वजह से यह माना गया कि प्रतीकात्मक कब्जे की डिलीवरी के आदेश ने प्रतिवादी के प्रतिकूल कब्जे को बाधित नहीं किया। यहां पर यह मामला नहीं है। वर्तमान मामले में संहिता के तहत संभवतः कब्जे की डिलीवरी का एकमात्र आदेश दिया जा सकता था। आदेश 21 नियम 35 (2) और 96 क्योंकि परिवार के अन्य सदस्य जिनका हिस्सा बेचा नहीं गया था, वे निश्चित रूप से कब्जे में रहने के हकदार थे। तथ्य यह है कि हिंदू कानून के प्रावधानों के मद्देनजर दिया गया आदेश अवैध है, वर्तमान उद्देश्य के लिए अप्रासंगिक है तथा बम्बई एवं इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय यहां पर लागू नहीं होता।

हालांकि, उत्तरदाताओं के विद्वान वकील ने तर्क दिया कि ओदश 21 नियम 35 (2) केवल वहीं लागू होता है जहां संयुक्त कब्जे के लिए डिक्री थी और यह वर्तमान मामले पर लागू नहीं होता क्योंकि यहां केवल डिलीवरी के लिए एक आदेश था। संयुक्त कब्जे का एन कि डिक्री का। इस तर्क को स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि एस के तहत । संहिता के 36 डिक्री के निष्पादन से संबंधित प्रावधान आदेशों के निष्पादन पर लागू होते हैं। किसी भी मामले में आदेश स्पष्ट रूप से O 21 R 96 की शर्तों

के भीतर है। इस मामले में प्रतीकात्मक कब्जे की डिलीवरी पूरी तरह से संहिता के नियमों के अनुरूप थी और इसलिए यह प्रतिवादी के काम में रुकावट के समान थी। प्रतिकूल कब्जा और कला के आवेदन के प्रयोजन के लिए परिसीमा की अवधि। 144 ऐसी डिलीवरी की तारीख से शुरू होगा। चूंकि मुकदमा कब्जे की डिलीवरी की तारीख से बारह साल के भीतर लाया गया था, अनुच्छेद 144 लागू होने पर भी इस पर रोक नहीं है।

अनुच्छेद 120 के तहत बाई शेवंतीबाई बनाम जनार्दन आर.वारिक एआईआर 1939 बम्बई 322 में यह माना गया है कि वर्तमान जैसे सूट के लिए यह वह लेख है जो लागू होता है। उत्तरदाताओं के विद्वान वकील ने स्वयं तर्क दिया कि यह लागू करने के लिए उपयुक्त अनुच्छेद था। यह अनुच्छेद उन मुकदमों पर लागू होता है जिनके लिए कहीं और कोई सीमा अवधि प्रदान नहीं की गई है और मुकदमा करने का अधिकार अर्जित होने की तारीख से शुरू होने वाली छह साल की अवधि निर्धारित करता है। उत्तरदाताओं के विद्वान वकील ने शेवंतीबाई की टिप्पणी पर भरोसा किया मामला। वर्तमान जैसे मुकदमे में अनुच्छेद 120 के तहत परिसीमा की अवधि बिक्री की तारीख से चलना शुरू होता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह मामला सही है, लेकिन हमारा मानना है कि इस संबंध में इसने कानून को सही ढंग से निर्धारित नहीं किया है। यह इस न्यायालय द्वारा श्रीमती रुखमाबाई बनाम लक्ष्मीनारायण; 1960 द्द 2 एससीआर 253 और सी.मोहम्मद यूनुस बनाम सैयद उन्नीसा एआईआर 1961 एससी 808 में

आयोजित किया गया है कि मुकदमा करने का अधिकार अनुच्छेद 120 के प्रयोजन के लिए तब प्राप्त होता है जब मुकदमे में दावा किए गए अधिकार का संचय होता है और प्रतिवादी द्वारा इसका उल्लंघन करने की स्पष्ट धमकी दी जाती है। अब वादी की प्रकृति चाहे जो भी होवर्तमान मामले में यह दिखाने के लिए कुछ भी नहीं है कि उत्तरदाताओं द्वारा उस अधिकार को कभी भी किसी भी तरह से चुनौती दी गई थी। इसलिए यह मानना असंभव है कि उसका मुकदमा कला 120 के तहत वर्जित था।

नतिजन दावा अनुच्छेद 144 व 120 की पालना से भी वर्जित नहीं होता है।

अब क्रॉस-आपत्ति से निपटना बाकी है। हमें नहीं लगता कि इसमें कोई योग्यता है.नीचे दी गई दोनों अदालतों ने माना है कि शिवय्या ने नीलामी में जो खरीदा वह संयुक्त परिवार की संपत्तियों में नरसिम्हास्वामी के चार बेटों का हिस्सा था। नीलामी की बिक्री की तारीख पर वह हिस्सा जो मूल रूप से 4/5 वां थाए दूसरे बेटे वेणुगोपाल के जन्म के कारण नरसिम्हास्वामी को 2/3 हिस्सा कम हो गया था, जिन्हें मुकदमे या निष्पादन कार्यवाही में कोई पक्ष नहीं बनाया गया था। यह पूछना अप्रासंगिक है कि क्या उनके जन्म के बाद पांचवें बेटे के हिस्से को 1933 के सूट नंबर 9 में डिक्री के निष्पादन में आगे बढ़ाया जा सकता है। यह कहना पर्याप्त है कि वास्तव में ऐसा नहीं किया गया था। निष्पादन बिक्री

में जो खरीदा गया वह केवल वेणुगोपाल के शेयर थे बिक्री की तिथि पर चार भाई थे और यह 2/3 था। ऐसा होने पर हमें लगता है कि शिवय्या विभाजन के मुकदमे में वेणुगोपाल का 1/6 वां हिस्सा भी पाने का हकदार नहीं था। प्रतिआपत्ति विफल होनी चाहिए। हम यह जोड़ सकते हैं कि नरसिम्हा स्वामी के हिस्से के खिलाफ कोई दावा नहीं किया गया है, जिसके दिवालियेपन का एक बार आदेश देने के बाद ऐसा प्रतीत होता है कि उसे रद्द कर दिया गया है।

परिणामस्वरूप हम अपील की अनुमति देंगे, क्रॉस-आपत्ति को खारिज करने के अलावा उच्च न्यायालय के फैसले और डिक्री को रद्द कर देंगे और विद्वान ट्रायल जज को बहाल करेंगे। अपीलकर्ता यहां और उच्च न्यायालय में आनुपातिक लागत के हकदार होंगे।

न्यायाधिपति रामास्वामी: इस अपील में विधिक प्रश्न यह है कि सामान्य विभाजन के लिए संयुक्त परिवार की संपत्ति में अविभाजित हिस्से के एलीयनी द्वारा दायर मुकदमे पर लागू परिसीमा की अवधि क्या है। अपीलकर्ता मृत वादी ममिदी चीना वेंकट शिवय्या के विधिक वारिसान हैं। उन्होंने 16 अक्टूबर 1951 को संयुक्त परिवार की संपत्तियों में 4/5 हिस्से के बंटवारे और अलग कब्जे के लिए मुकदमा दायर किया था। यह आरोप लगाया गया है कि उन्होंने 21 दिसंबर 1936 को लघु वाद न्यायालय के एक डिक्री के निष्पादन में आयोजित एक अदालत नीलामी बिक्री में

प्रतिवादियों 2 से 5 के अविभाजित हिस्से को खरीदा था। बिक्री की पुष्टि 23 फरवरी 1937 को की गई थी। बाद में यानी 5 मार्च 1939 को क्रेता शिवय्या ने अपने द्वारा खरीदा गया अधिकार प्रकाशलिंगम को बेच दिया जिसके बारे में यह आरोप लगाया गया है 6 नवंबर 1939 को संयुक्त परिवार की संपत्तियों के अविभाजित हिस्से के कब्जे की प्रतीकात्मक डिलीवरी प्राप्त की। ऐसा प्रतीत होता है कि शिवय्या ने 11 अप्रैल 1945 को प्रकाशलिंगम से अधिकार का पुनर्ग्रहण प्राप्त किया। शिवय्या ने 16 अक्टूबर 1951 को इसके खिलाफ वर्तमान मुकदमा लाया। अन्य सहदायिक और कुछ सहदायिकों से अलग व्यक्ति। शिवय्या द्वारा सामान्य बंटवारे के लिए मुकदमा दायर किया गया था। प्रतिवादियों का मुख्य बचाव यह था कि मुकदमा परिसीमा द्वारा वर्जित था। ट्रायल कोर्ट ने माना कि मुकदमा अनुच्छेद 144 द्वारा शासित था। परिसीमा अधिनियम की अनुच्छेद 120 लागू नहीं होते। ट्रायल कोर्ट ने यह भी पाया कि 6 नवंबर 1939 को प्रकाशलिंगम के पक्ष में कब्जे की प्रतीकात्मक डिलीवरी हुई थी और प्रतिवादियों 1 से 5 के प्रतिकूल कब्जे का विभाजन हुआ था और इसलिए मुकदमा दायर किया गया था। अतः परिसीमा अवधि के भीतर लाया गया ट्रायल कोर्ट ने माना कि छठे प्रतिवादी का 1/6 हिस्सा सहदायिकों में से एक वादी को नहीं मिला क्योंकि छठे प्रतिवादी का जन्म अदालत की बिक्री से पहले हुआ था और उसे वर्तमान मामले में एक पक्ष के रूप में शामिल नहीं किया गया था। ट्रायल कोर्ट ने तदनुसार वादी को वादी की अनुसूची में

उल्लिखित संपत्तियों के 2/3 हिस्से के विभाजन और अलग कब्जे के लिए एक डिक्री दी। प्रतिवादियों ने ट्रायल कोर्ट के फैसले और डिक्री के खिलाफ आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के समक्ष अपील की। वादी ने छोटे प्रतिवादी के 1/6 वें हिस्से का दावा करते हुए क्रॉस आपत्तियों का एक ज्ञापन भी दायर किया। उच्च न्यायालय ने माना कि परिसीमा अधिनियम की अनुच्छेद 144 मुकदमे पर लागू होती है और प्रतिवादियों का प्रतिकूल कब्जा नीलामी बिक्री की तारीख से शुरू होता है और मुकदमा परिसीमा द्वारा वर्जित था क्योंकि यह 16 अक्टूबर 1951 को दायर किया गया था यानी 12 साल से अधिक समय के बाद। नीलामी बिक्री उच्च न्यायालय ने यह भी माना कि प्रतीकात्मक वितरण का कोई कानूनी प्रभाव नहीं था और इसने प्रतिवादियों के प्रतिकूल कब्जे को नहीं तोड़ा। तदनुसार उच्च न्यायालय ने अपील की अनुमति दी और मुकदमा पूरे जुर्माने के साथ खारिज कर दिया गया। वर्तमान अपील आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के फैसले और डिक्री के खिलाफ मृत वादी शिवय्या के कानूनी प्रतिनिधियों की ओर से प्रस्तुत की गई है। उच्च न्यायालय ने यह भी माना कि प्रतीकात्मक वितरण का कोई कानूनी प्रभाव नहीं था और इसने प्रतिवादियों के प्रतिकूल कब्जा भंग नहीं होता। तदनुसार उच्च न्यायालय ने अपील की अनुमति दी और मुकदमा पूरे जुर्माने के साथ खारिज कर दिया गया। वर्तमान अपील आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के फैसले और डिक्री के खिलाफ मृत वादी शिवय्या के कानूनी प्रतिनिधियों की ओर से प्रस्तुत की गई है। उच्च न्यायालय ने यह भी

माना कि प्रतीकात्मक वितरण का कोई कानूनी प्रभाव नहीं था और इसने प्रतिवादियों के प्रतिकूल कब्जे को नहीं तोड़ा। तदनुसार उच्च न्यायालय ने अपील की अनुमति दी और मुकदमा हर्जे के साथ खारिज कर दिया गया। वर्तमान अपील आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के फैसले और डिक्री के खिलाफ मृत वादी शिवय्या के कानूनी प्रतिनिधियों की ओर से प्रस्तुत की गई है।

इस प्रश्न से निपटने से पहले कि परिसीमा अधिनियम का कौन सा अनुच्छेद वर्तमान मामले पर लागू होता है शिवय्या जैसे व्यक्तियों की कानूनी स्थिति की जांच करना आवश्यक है जो हिंदू संयुक्त परिवार के कुछ सहदायिकों के शेयर खरीदते हैं। यह अच्छी तरह से स्थापित है कि क्रेता को बेची गई संपत्ति में कोई हित प्राप्त नहीं होता है और वह पारिवारिक संपत्ति के किसी निश्चित टुकड़े पर कब्जा करने का दावा नहीं कर सकता है। क्रेता को एलियनी के स्थान पर प्रतिस्थापित होने और विभाजन के माध्यम से अपने अधिकारों का उपयोग करने के लिए केवल एक समता प्राप्त होती है। समता मूल्य के लिए अलगाव पर निर्भर करती है व कोई संविदात्मक संबंध नहीं खोलती है। क्रेता संयुक्त परिवार के अन्य सदस्यों के साथ किरायेदार नहीं बनता है। वह उनके साथ संयुक्त कब्जे का हकदार नहीं है। एलियनी एसविभाजन का मुकदमा पूरी संपत्ति के विभाजन के लिए होना चाहिए, न कि पारिवारिक संपत्ति की किसी विशिष्ट वस्तु या उसके हित के विभाजन के लिए। हालाँकि ऐसा मुकदमा तकनीकी रूप से सहदायिक द्वारा दायर विभाजन के मुकदमे के बराबर नहीं होगा। इस तरह

के मुकदमे का न तो शेष संपत्ति में परिवार के सदस्यों के संयुक्त स्वामित्व को तोड़ने का आवश्यक प्रभाव होगा और न ही परिवार का कॉर्पोरेट करेक्टर।

अपीलकर्ताओं की ओर से विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि विभाजन के लिए मुकदमा करने का अधिकार एक सतत अधिकार है और इस तरह के अधिकार को लागू करने के लिए कोई सीमा अवधि नहीं है। मेरी राय में इस तर्क का कोई औचित्य नहीं है। सहदायिक से अलग व्यक्ति द्वारा दायर किया गया विभाजन का मुकदमा तकनीकी अर्थ में विभाजन का मुकदमा नहीं है और जैसा कि पहले ही कहा गया है इस तरह के मुकदमे का परिवार के सदस्यों के संयुक्त स्वामित्व के विभाजन का आवश्यक प्रभाव नहीं होगा। संयुक्त संपत्ति में और न ही परिवार के कॉर्पोरेट चरित्र में। जैसा कि भाष्यम अयंगर ए. जे. द्वारा अय्यागरी वेंकटरमैया बनाम अय्यागरी रामय्या आईएलआर 25 मद्रास 690 पेज 717 में देखा गया।

"वेंडी एसविभाजन द्वारा बिक्री को लागू करने का मुकदमा विभाजन का मुकदमा नहीं है तकनीकी अर्थ में जिसमें हिंदू कानून में विभाजन या विभाग का उपयोग किया जाता है। तकनीकी अर्थ में विभाजन का मुकदमा केवल परिवार के अविभाजित सदस्य द्वारा ही लाया जा सकता है। ऐसे बँटवारे का अधिकार उसका व्यक्तिगत है और हस्तांतरणीय नहीं है।

इस तरह का मुकदमा केवल सहदायिक के जीवनकाल में ही लाया जा सकता है और यदि लाया भी जाए तो यह तब समाप्त हो जाएगा जब अंतिम डिक्री से पहले उसकी मृत्यु हो जाए, बिना किसी पुरुष मुद्दे को छोड़े। तकनीकी अर्थ में विभाजनए चाहे सौहार्दपूर्ण तरीके से किया गया हो या अदालत के आदेश से न केवल संपत्ति के संयुक्त स्वामित्व को तोड़ता है बल्कि परिवार संघ यानी परिवार के कॉर्पोरेट चरित्र को भी तोड़ता है। इसके बाद प्रत्येक सदस्य अपने उत्तराधिकारियों की एक अलग पंक्ति के साथ एक विभाजित सदस्य बन जाता है। परिवार का एक अविभाजित सदस्य (Gurulinhappa vs Nandappa - ILR 21 Bom. 797) या उसके अविभाजित हिस्से का कोई भी हिस्सा उसके द्वारा हस्तांतरित की गई पारिवारिक संपत्ति के अलावा सभी पारिवारिक संपत्ति के संबंध में उसके और शेष सदस्यों के बीच जीवित रहने के अधिकार के साथ परिवार का अविभाजित सदस्य बना रहेगा। हालाँकि हस्तांतरितकर्ता परिवार के सदस्य के रूप में हस्तांतरणकर्ता के स्थान पर कदम नहीं रखता है और उसे हस्तांतरित संपत्ति में से किसी के संबंध में उसके और परिवार के सभी या किसी भी सदस्य के बीच संपत्ति का कोई समुदाय नहीं होगा। या

परिवार की बाकी संपत्ति।"

मेरी राय में, वर्तमान जैसा वाद परिसीमा अधिनियम के अनुच्छेद 144 के अंतर्गत आएगा। यह सच है कि एक हिंदू सहदायिक के अविभाजित हित का कोई अन्य व्यक्ति अन्य सहदायिक के साथ संयुक्त कब्जे का हकदार नहीं है और वह पारिवारिक संपत्ति के किसी भी हिस्से पर अलग से कब्जा करने का भी हकदार नहीं है। लेकिन एलियनी व्यक्ति पारिवारिक संपत्ति के उस हिस्से पर कब्जा पाने का हकदार है जो विभाजन के समय उसके एलियनी के हिस्से में आ सकता है। खरीद के माध्यम से एलीयनी व्यक्ति जो प्राप्त करता है वह विशिष्ट पारिवारिक संपत्ति में कोई दिलचस्पी नहीं है बल्कि विभाजन के मुकदमे में अपने अधिकार को लागू करने के लिए केवल एक समता है और अलग की गई संपत्ति को विदेशी व्यक्ति के लिए अलग कर दिया गया है। यदि संभव हो तो साझा करें। वर्तमान मामले में विदेशी व्यक्ति ने इस प्रार्थना के साथ सामान्य विभाजन के लिए एक मुकदमा दायर किया है कि वह पारिवारिक संपत्ति के उस हिस्से पर कब्जा कर सकता है जो उसके विदेशी को आवंटित किया जा सकता है। ऐसे मुकदमे को मात्र बँटवारे का वाद मानना उचित नहीं है। वादी द्वारा मांगी गई मुख्य राहत संपत्ति के उस हिस्से के कब्जे के लिए राहत है जिसे विदेशी के हिस्से में आवंटित किया जा सकता है और विभाजन के लिए राहत केवल उसके अधिकार को पूरा करने के लिए एक मशीनरी है और कब्जे के लिए मुख्य राहत के लिए सहायक है। एलियनर

को आवंटित संपत्तिशेयर करना। वादी जो चाहता है वह कब्जे की वास्तविक डिलीवरी है। मेरी राय में ऐसा मुकदमा परिसीमा अधिनियम के अनुच्छेद 144 के दायरे में आता है और इस बिंदु पर कानून थानी बनाम दक्षिणमूर्ति आईएलआर (1955) मद्रास 1278 में सही ढंग से कहा गया है ।

यदि अनुच्छेद 144 लागू होना वाला उचित अनुच्छेद है तो उसमें समय कब चलना शुरू होता है अनुच्छेद 144 के तीसरे स्तम्भ के अनुसार समय उस तिथि से चलना प्रारम्भ होता है जब प्रतिवादी का कब्जा वादी के प्रतिकूल हो जाता है। जैसा कि मैंने पहले ही बताया है परिवार के गैर-अलगावकारी सदस्यों के कब्जे को एलियनी की ओर से भी कब्जा नहीं माना जा सकता है क्योंकि क्रेता एलियनी को बेची गई संपत्ति में कोई ब्याज नहीं मिलता है और वह किरायेदार नहीं बनता है। वह परिवार के सदस्यों के साथ साझा नहीं है और न ही उनके साथ संयुक्त कब्जे का हकदार है। यह स्पष्ट है कि विदेशी व्यक्ति के अधिकार की स्पष्ट स्वीकृति या अलगाव द्वारा पारिवारिक संपत्ति के आनंद में भागीदारी के अभाव में गैर-संक्रमणकारी सहदायिकों का कब्जा विदेशी व्यक्ति के लिए प्रतिकूल होगा, का हिस्सा यह तथ्य कि विदेशी व्यक्ति ने संयुक्त परिवार की संपत्ति का अविभाजित हित खरीदा है उस हित के प्रतिकूल कब्जे की अवधारणा से असंगत नहीं है। जैसा कि लॉर्ड रैडक्लिफ ने सुदर्शन दास बनाम किरपाल दास एआईआर 1950 पीसी 44 पेज 47 पर देखा।

"अब यह प्रतिवादी का मामला है . यह वास्तव में इस मुद्दे पर उनका मुख्य तर्क है कि अपीलकर्ता ने कभी भी उनके खिलाफ प्रतिकूल कब्जा नहीं किया है क्योंकि विवादित संपत्ति चार आने का अविभाजित हिस्सा है उसका कब्जा पूरी तरह से रहा है उनके साथ संयुक्त कब्जे से अधिक कुछ नहीं और अविभाजित संपत्ति के संबंध में सहदायिकों को जो संयुक्त कब्जा प्राप्त हुए उसमें प्रथम दृष्टया उनमें से किसी एक का विशेष कब्जा दूसरों के लिए प्रतिकूल नहीं है। उनके आधिपत्य में कोई संदेह नहीं है इस सामान्य नियम की वैधतारू लेकिन वे यह सोचने में असमर्थ हैं कि अगर वे विवादित संपत्ति के संबंध में अपीलकर्ता की राय मानते हैं तो यह किसी भी तरह से अलग हो जाएगा। कब्जा अन्य शेरों के मालिकों के प्रतिकूल रहा है। सच तो यह है कि इस बहस में कुछ भ्रम है। यहां जिस बात का प्रश्न है वह संपत्ति के उस खंड पर प्रतिकूल कब्जा नहीं है जिसमें विभिन्न अविभाजित हित मौजूद हैं बल्कि एक अविभाजित हित पर प्रतिकूल कब्जा है। अनुच्छेद 144 निश्चित रूप से अचल संपत्ति के साथ.साथ संपत्ति में भी हित को शामिल करने के लिए प्रतिकूल कब्जे की अवधारणा का विस्तार करता है और न ही उत्तरदाताओं द्वारा इस तर्क में विवादित

किया गया था कि उचित परिस्थितियों को देखते हुए
अविभाजित हिस्से पर प्रतिकूल कब्जा हो सकता है।"

वर्तमान मामले में इसलिए प्रतिकूल कब्जा अविभाजित शेयर की खरीद की तारीख से यानी 21 दिसंबर 1936 से चलना शुरू हुआ लेकिन अपीलकर्ताओं की ओर से यह प्रस्तुत किया गया कि प्रकाशलिंगम ने नवंबर को अविभाजित शेयर की प्रतीकात्मक डिलीवरी और कब्जा प्राप्त किया। 6.11.1939 के बाद प्रतिवादियों 2 से 5 को नोटिस के बाद और कब्जे के लिए वर्तमान मुकदमे को कायम रखने की कार्रवाई का एक नया कारण था। उत्तरदाताओं की ओर से यह तर्क दिया गया कि प्रतीकात्मक वितरण अवैध था और निष्पादन अदालत संयुक्त परिवार की संपत्ति के अविभाजित हित की बिक्री के संबंध में प्रतीकात्मक या वास्तविक कब्जे के वितरण का आदेश देने में सक्षम नहीं थी। इस तर्क के समर्थन में येलुमलाई चेट्टी बनाम श्रीनिवास चेट्टी ILR 29 Mad. 294 में दिए गए निर्णय पर भरोसा रखा गया, जिसमें यह माना गया कि संयुक्त हिंदू परिवार के एक अविभाजित सदस्य के हिस्से की अदालती बिक्री पर क्रेता केवल विभाजन के लिए मुकदमा करने और ऐसे अविभाजित सदस्य के हिस्से के रूप में आवंटित की जाने वाली राशि की डिलीवरी के लिए मुकदमा करने का अधिकार प्राप्त करता है और न्यायालय ऐसे क्रेता द्वारा निष्पादन के लिए मात्र एक आवेदन पर विभाजन के आदेश द्वारा उसके अधिकार को लागू नहीं किया जा सकता है। आगे यह माना गया कि नागरिक प्रक्रिया संहिता

की धारा 318 के तहत ऐसा कोई आदेश नहीं दिया जा सकता है और क्रेता द्वारा किसी आवेदन को न्यायालय द्वारा खारिज किया जा सकता है। धारा 318 क्रेता द्वारा विभाजन के मुकदमे में बाधा नहीं बन सकता। यह मानते हुए भी कि कब्जे का प्रतीकात्मक वितरण नहीं किया जाना चाहिए था और निष्पादन न्यायालय ने ऐसा आदेश देने में अवैध रूप से कार्य किया यह तर्क नहीं दिया जा सकता है कि निष्पादन न्यायालय के पास आदेश देने का कोई क्षेत्राधिकार नहीं था या प्रतीकात्मक कार्य कानून की नजर में कब्जा अमान्य था। इसलिए मेरी राय है कि प्रतिवादियों 2 से 5 को नोटिस के बाद प्रकाशलिंगम के पक्ष में अदालत द्वारा प्रतीकात्मक कब्जा देना कानून में वास्तविक कब्जे की डिलीवरी के समान था और इसलिए प्रतिकूल की निरंतरता को तोड़ने के लिए पर्याप्त था। प्रतिवादियों के पक्ष में कब्जा श्री राधा कृष्णचंद्रजी बनाम राम बहादुर एआईआर 1917 पीसी 197 में लॉर्ड समर द्वारा यह माना गया था कि किसी पार्टी को बेदखल करने के लिए प्रतीकात्मक कब्जा पर्याप्त रूप से उपलब्ध था जहां वह उस कार्यवाही में एक पार्टी थी जिसमें इसे आदेश दिया गया था और दिया गया था। तदनुसार मेरी राय है कि वादी का मुकदमा परिसीमा अधिनियम के अनुच्छेद 144 के तहत परिसीमा द्वारा वर्जित नहीं है और मामले के इस भाग पर उच्च न्यायालय द्वारा लिया गया दृष्टिकोण सही नहीं है और इसे खारिज कर दिया जाना चाहिए।

अपीलकर्ताओं की ओर से यह भी तर्क दिया गया कि संयुक्त परिवार

की संपत्तियों के 5/6 हिस्से के लिए डिक्री दी जानी चाहिए थी, न कि केवल 2/3 हिस्से के लिए। अपीलकर्ताओं के दावे को ट्रायल कोर्ट ने खारिज कर दिया था। वादी द्वारा इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि छठा प्रतिवादी अदालत की बिक्री से पहले था और यह भी विवादित नहीं है कि निष्पादन का मामला केवल प्रतिवादियों 2 से 5 के खिलाफ निकाला गया था। यह स्पष्ट है कि वादी कब्जा वापस पाने का हकदार नहीं है निष्पादन कार्यवाही में छठे प्रतिवादी की हिस्सेदारी और उच्च न्यायालय में वादी की ओर से दायर क्रॉस-आपत्ति में कोई योग्यता नहीं है। मैं इस बिंदु पर अपीलकर्ताओं द्वारा दिए गए तर्क को स्वीकार करने में असमर्थ हूँ।

इन कारणों से मेरा मानना है कि उच्च न्यायालय के फैसले और डिक्री को रद्द कर दिया जाना चाहिए और ट्रायल कोर्ट के फैसले और डिक्री को बहाल किया जाना चाहिए और संपत्तियों के विभाजन की प्रारंभिक डिक्री दी जानी चाहिए जैसा कि ट्रायल कोर्ट में उल्लिखित है का फरमान तदुसार लागत सहित अपील स्वीकार की जाती है।

अपील स्वीकार की जाती है।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी कार्तिक शर्मा (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।